

सुषम बेदी के साहित्य में प्रवासी अनुभव और सांस्कृतिक द्वंद्व

Sajitha P C¹, Dr. P Geetha²

¹ Research Scholar, Department of Hindi, Government Arts and Science College Calicut, Kerala, India, Affiliated to University of Calicut, Kerala, India

² Professor and Principal (Rtd), Sri Vyasa NSS College, Wadakkanchery, Kerala, India, Affiliated to University of Calicut, Kerala, India

सारांश

हिंदी साहित्य में प्रवासी लेखन अब एक ऐसी धारा बन चुका है, जो विदेशों में बसे भारतीयों के जीवन को बहुत करीब से समझने और महसूस करने का अवसर देती है। इसमें उनके रोजमर्रा के अनुभव, संघर्ष, खुशियाँ और भीतर छिपी संवेदनाएँ सहज रूप में सामने आती हैं। इस दिशा में सुषम बेदी का योगदान खास तौर पर उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने कथा-साहित्य के जरिए प्रवासी भारतीयों के जीवन की जटिलताओं को बहुत ही मानवीय और संवेदनशील ढंग से प्रस्तुत किया है। उनके लेखन में केवल विदेश की चमक-दमक ही नहीं, बल्कि वहाँ जी रहे लोगों का अकेलापन, अपनी पहचान को लेकर उठते सवाल और दो संस्कृतियों के बीच चलने वाला अंदरूनी संघर्ष भी गहराई से महसूस किया जा सकता है।

मूलशब्द: प्रवासी साहित्य, भारतीय परंपरा, संस्कार, अकेलापन, स्त्री चेतना, सामाजिक यथार्थ, अस्मिता

सुषम बेदी हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण प्रवासी कथाकार हैं, जिनकी रचनाओं में विदेश में बसे भारतीयों के जीवन की जटिलताएँ, संवेदनाएँ और मानसिक संघर्ष अत्यंत प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुए हैं। उनका साहित्य मुख्यतः

प्रवासी भारतीयों के अनुभवों और उनसे उत्पन्न सांस्कृतिक द्वंद्व को केंद्र में रखता है। सुषम बेदी की कहानियों और उपन्यासों में प्रवासी जीवन की वास्तविकता दिखाई देती है। विदेश जाने के बाद व्यक्ति भौतिक रूप से समृद्ध तो हो जाता है, परंतु भावनात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर वह अकेलापन, असुरक्षा और पहचान-संकट का सामना करता है। उनकी रचनाओं में पात्र अक्सर अपने 'घर' (भारत) और 'परदेस' (विदेश) के बीच झूलते रहते हैं। यह द्वंद्व उन्हें न तो पूरी तरह भारतीय रहने देता है और न ही पूरी तरह विदेशी बना पाता है।

प्रवासी रचनाओं में परिवार की अवधारणा को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यह केवल माता-पिता और बच्चों तक सीमित नहीं है। प्रवासी कहानियाँ अक्सर पीढ़ियों के बीच संघर्ष को दर्शाती हैं जहाँ पहली पीढ़ी अपने पारंपरिक मूल्यों को बनाए रखना चाहती है। दूसरी पीढ़ी पश्चिमी स्वतंत्रता और व्यक्तिवाद के बीच संतुलन खोजने का प्रयास करती है। यह साहित्य दिखाता है कि दूर देश में रहते हुए भी सामूहिक सामाजिक आयोजन जैसे त्योहार, विवाह समारोह सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने के केंद्र बिंदु होते हैं। अपनी भूमि को छोड़कर विदेश गया व्यक्ति पीढ़ी दर पीढ़ी प्रवासी ही रहता है। उसके मन में प्रवास की पीड़ा होती है। उसके मन में एक दुविधा निरंतर बनी रहती है कि यह नई दुनिया उसके लिए अधिक अच्छी है या नहीं। वह अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और अपने जीवन मूल्यों को बराबर पकड़े रहना चाहता है, क्योंकि यही दूसरे देश में उसकी अपनी पहचान है। नए देश के मूल निवासी कभी भी उसे पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं पाते। रूप-रंग ही नहीं, भाषा, खान-पान, आचार-विचार, रीति-रिवाज और जीवन मूल्यों का अंतर विदेश में उसे अलग बनाए रखता है। यही प्रवासी का दंश है।

'हवन' सुषम बेदी के एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। यह गुड्डो नामक एक विधवा की कहानी है, जो अपने छोटे बेटे राजू के साथ अमेरिका के न्यूयॉर्क शहर में पलायन कर जाती है। उसे

उसकी बहन पिकी ने अमेरिका में एक शानदार और आकर्षक जीवन का सपना दिखाकर बुलाया था। कहानी एक नए साल की पूर्वसंध्या पर गुड्डो के अपार्टमेंट में आयोजित एक हवन के इर्द-गिर्द घूमती भारत में गुड्डो का जीवन सम्मान और प्रतिष्ठा से भरा था। अमेरिका में उसका अस्तित्व सिर्फ जीवित रहने की जद्दोजहद में सिमट कर रह जाता है। उपन्यास इस कड़वी सच्चाई को उजागर करता है कि प्रवासी जीवन में अक्सर सामाजिक स्तर का नीचे गिरना एक कठोर वास्तविकता होती है। गुड्डो के लिए हवन करना अपनी जड़ों, अपनी परंपरा और अपनी आस्था से जुड़े रहने का अंतिम प्रयास है। यह एक ऐसी दुनिया में 'घर' की भावना को फिर से बनाने का साधन है। यह उपन्यास प्रवासी अनुभव को एक महिला की दृष्टि से देखता है। अमेरिका आकर भी वह पारंपरिक पितृसत्तात्मक ढाँचे से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाती। गुड्डो को अमेरिका में संघर्ष, अकेलापन और सांस्कृतिक अलगाव का सामना करना पड़ता है। भारत में उसका जीवन सुखद और सम्मानजनक था, लेकिन अमेरिका में वह अपनी पहचान और प्रतिष्ठा खो देती है। गुड्डो का पात्र एक भारतीय माँ के आदर्श का प्रतिनिधित्व करता है। पति की मृत्यु के बाद, वह अपनी बेटियों की शादी और बेटे के भविष्य के बारे में सोचती है।

सबसे पहले, अणिमा के चरित्र के माध्यम से लेखिका ने यह दिखाता है कि शिक्षित और योग्य होने के बावजूद प्रवासी भारतीयों को नस्लीय पूर्वाग्रहों का सामना करना पड़ता है। अणिमा की क्षमता पर केवल इसलिए संदेह किया जाता है क्योंकि वह एशियाई महिला है। यहाँ नस्लवाद केवल त्वचा के रंग या जातीय पहचान तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह बौद्धिक योग्यता पर भी प्रश्नचिह्न लगा देता है। उपन्यास में यह भी दिखाया गया है कि यह भेदभाव केवल नौकरी तक सीमित नहीं, बल्कि शिक्षा संस्थानों में भी गहराई तक व्याप्त है। प्रवासी विद्यार्थियों को अपमानजनक टिप्पणियों और व्यवहार का सामना करना पड़ता है। इससे उनके आत्मसम्मान और मानसिक संतुलन पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। राधिका के माध्यम से मूल्यों की टकराव का चित्रण अत्यंत जीवंत रूप में सामने आता है। भारतीय संस्कारों से जुड़े माता-पिता और पश्चिमी संस्कृति में ढली नई पीढ़ी के बीच गहरा वैचारिक संघर्ष दिखाई देता है।

राधिका अपने माता-पिता की परंपराओं को बंधन मानती है और अपनी स्वतंत्रता को सर्वोपरि रखती है। वह अपनी सांस्कृतिक जड़ों से दूर होती चली जाती है और अंततः अपनी पहचान तक बदलने लगती है। यह प्रवासी युवाओं की उस मानसिकता को दिखाता है, जिसमें वे सामाजिक स्वीकार्यता के लिए अपनी मूल पहचान तक त्यागने को तैयार हो जाते हैं। इसके साथ ही, गुड्डो और उसकी बेटियों के माध्यम से लेखिका ने पारिवारिक संस्कारों और नैतिक मूल्यों की भूमिका को भी उजागर किया है। गुड्डो ने अपने जीवन के अनुभवों और संघर्षों के आधार पर अपनी बेटियों को सशक्त नैतिकता और अनुशासन में ढाला। विशेषतः अणिमा पर उसकी माँ का गहरा प्रभाव दिखाई देता है, जिसने उसके व्यक्तित्व को दृढ़, आत्मविश्वासी और संघर्षशील बनाया। हवन में सुषम बेदी ने प्रवासी जीवन के तीन महत्वपूर्ण आयामों नस्लवाद, सांस्कृतिक टकराव और पारिवारिक संस्कार को आपस में जोड़कर प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास प्रवासी जीवन केवल बाहरी संघर्षों का नहीं, बल्कि आंतरिक द्वंद्व, पहचान के संकट और मूल्यों की पुनर्स्थापना की भी एक जटिल प्रक्रिया है।

सुषम बेदी का दूसरा उपन्यास 'लौटना' केवल एक उपन्यास नहीं है, बल्कि एक स्त्री की उस अंतर्गता का दस्तावेज है जो बाहरी दुनिया में तो खो चुकी है, लेकिन भीतर ही भीतर अपने वास्तविक अस्तित्व को लौटने के लिए छटपटाती है। मीरा एक नर्तकी है। उसका विवाह विजय से होता है, और विवाह के बाद वह अमेरिका चली जाती है। प्रारंभ में उसका पति उसके नृत्य के शौक में पूरा सहयोग देता है, लेकिन धीरे-धीरे पारिवारिक जिम्मेदारियाँ बढ़ती हैं, और मीरा को अपने शौक से विरक्त होना पड़ता है। कुछ समय बाद पति ही उससे दूरी बना लेता है और किसी दूसरी स्त्री के साथ संबंध स्थापित कर लेता है। मीरा का जीवन ऐसे भँवर में फँस जाता है जहाँ न आगे बढ़ना आसान है, न पीछे मुड़ना। मीरा घबराती नहीं है, बल्कि संघर्ष करने का निश्चय करती है। 'लौटना' केवल एक स्त्री की अस्मिता की खोज की कहानी नहीं है, बल्कि यह हर उस मनुष्य की कहानी है जो अपने भीतर की आवाज को दबाकर दूसरों की खातिर जीने लगता है। सुषम बेदी ने मीरा के माध्यम से यह बताने का सुंदर और प्रभावी प्रयास किया है कि किसी भी व्यक्ति के लिए सबसे कठिन काम अपने अंदर की सच्चाई को स्वीकारना और उस दिशा में लौटना होता है। 'लौटना' इसलिए भी महत्वपूर्ण उपन्यास है क्योंकि यह किसी को हारता हुआ नहीं दिखाता, बल्कि उठते हुए दिखाता है। यह उपन्यास उन सभी महिलाओं के लिए प्रेरणा है जो किसी नए परिवेश या रिश्ते में अपनी पहचान खो बैठती हैं।

लौटना की नायिका मीरा को अपनी योग्यता के बावजूद केवल इसलिए अस्वीकार कर दिया जाता है क्योंकि उसकी पीएच.डी. भारत से है। यहाँ पश्चिमी दृष्टिकोण में भारतीय शिक्षा को निम्नतर मानने की मानसिकता स्पष्ट होती है। प्रोफेसर का यह कथन न केवल व्यक्तिगत अपमान है, बल्कि यह पूरे भारतीय बौद्धिक वर्ग के प्रति पूर्वाग्रह को दर्शाता है। हवन और लौटना केवल प्रवासी जीवन की कहानियाँ नहीं हैं, बल्कि वे नस्लवाद की उस पीड़ा को उजागर करती हैं जो शिक्षित और योग्य व्यक्तियों को भी झेलनी पड़ती है।

सुषम बेदी का उपन्यास 'कतरा दर जीवन के धीरे-धीरे मिटने की कहानी है। यह कहानी पल-पल निराशा से आशा और आशा से निराशा की ओर ले जाती है। इस उपन्यास का केंद्र है कक्कू – एक छात्र जो अपने पिता की उम्मीदों पर खरा नहीं उतर पाता। पिता की बढ़ती उम्मीदें और उस पर खरा न उतरने का गिल्ट धीरे-धीरे उसे अंदर ही अंदर खाने लगता है। वह हीन भावना का इतना गहरा शिकार हो जाता है कि उसकी मानसिक हालत बहुत बिगड़ जाती है। धीरे-धीरे उसका सामान्य मन पागलपन में बदलने लगता है। दुख की बात

यह है कि परिवार में कोई कक्कू की इस स्थिति को समझ नहीं पाता। सब उसे सिर्फ 'पागल' या 'बिगड़ा हुआ' कहकर नजरअंदाज कर देते हैं। लेकिन एक व्यक्ति उसे समझती है – उसकी बहन शनि जो मनोविज्ञान की पढ़ाई कर रही होती है। वह भाई की पीड़ा को पहचानती है और उसके सुख-दुख की साथी बन जाती है। 'कतरा दर कतरा' सिर्फ एक मानसिक रोगी की कहानी नहीं है। यह उस परिवार की कहानी है जो समय रहते अपने सदस्य के दर्द को नहीं पहचानता। यह उस लड़की की कहानी है जो भाई को बचाना चाहती है लेकिन समाज के चक्कर में खुद टूट जाती है। यह उस पिता की कहानी है जो अपनी उम्मीदों के बोझ से बेटे को कुचल देता है। मानसिक बीमारी कोई शर्म या कलंक नहीं है। समय रहते प्यार, समझ और सही इलाज से कई टूटते मनो को बचाया जा सकता है। सुषम बेदी ने इतर उपन्यास में बहुत ही सटीक और करारे शब्दों में यह दिखाया है कि कैसे मानवीय कमजोरियाँ – अकेलापन, डर, असुरक्षा – लोगों को झूठे बाबाओं के पास ले जाती हैं। और फिर वे बाबा अपने तंत्र-मंत्र से उन्हें ऐसा फँसाते हैं कि निकलना मुश्किल हो जाता है। यह उपन्यास उन भारतीयों की कहानी है जो अमेरिका में बस गए हैं। उन्होंने वहाँ की संस्कृति से अपना नाता जोड़ लिया है, लेकिन फिर भी अपनी मानवीय कमजोरियों के कारण वे झूठे संतों और बाबाओं के चंगुल में आसानी से फँस जाते हैं। इस उपन्यास में स्वामी रामानंद उन सभी कुटिल बाबाओं का प्रतीक है जो तंत्र-मंत्र और जादू-टोने से लोगों को अपना शिकार बनाते हैं। वे लोगों की कमजोरियों का फायदा उठाते हैं। डॉ. अभिषेक एक सफल डॉक्टर हैं। उनकी अच्छी-खासी प्रैक्टिस है, लेकिन वह सब कुछ छोड़कर बाबा रामानंद के चरणों में इस कदर समर्पित हो जाते हैं कि उनका तन, मन और धन – सब कुछ बाबा के नाम हो जाता है। अल्पना अपने पति को खुद से दूर होते देख रही है, उधर माधव और रूपा की कहानी और भी दर्दनाक है। रूपा की बाबा के प्रति आस्था इतनी बढ़ जाती है कि वह माधव से पूरी तरह अलग हो जाती है। इस अलगाव का परिणाम यह होता है कि माधव पागल हो जाता है। सबसे हैरान करने वाली बात यह है कि केवल भारतीय ही नहीं, बल्कि विदेशी भी इन झूठे बाबाओं के जाल में फँस जाते हैं। यह उपन्यास हर उस व्यक्ति के लिए चेतावनी है जो किसी भी 'बाबा' को अपना सब कुछ सौंपने से पहले एक बार रुककर सोचना है।

सुषम बेदी का उपन्यास 'गाथा अमरबेल की' नारी मन में उठने वाली अनेक भावनाओं का बहुत सफल चित्रण है। यह एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो अपनी आकांक्षाओं में इतनी खो जाती है कि धीरे-धीरे वह खुद अपने परिवार के लिए मुसीबत बन जाती है। यह उपन्यास हमें यह सिखाता है कि केवल अपनी उड़ान भरना ही सब कुछ नहीं है, बल्कि दूसरों को भी साथ लेकर चलना भी उतना ही जरूरी है। उपन्यास की नायिका शन्नो बहुत छोटी उम्र में ही विश्वा से शादी के बंधन में बंध जाती है। शादी के कुछ समय बाद ही विश्वा अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए दूसरे शहर चला जाता है। एक दिन अचानक विश्वा का पत्र आता है। उस पत्र में वह शन्नो को बताता है कि उसे अपनी सहपाठिन अनुसुइया से प्यार हो गया है। वह उसी से शादी करके अपनी जिंदगी बिताना चाहता है। लेकिन अंत में विश्वा शन्नो के पास वापस लौट आता है। विश्वा की मृत्यु के बाद शन्नो का एकमात्र सहारा उसका बेटा गौतम रह जाता है। गौतम अपनी पसंद से दिव्या नाम की लड़की से शादी करता है। दिव्या बहुत संस्कारी और सुशील है। शन्नो दिव्या जैसी अच्छी बहू के साथ भी अपना तालमेल नहीं बिठा पाती। उसकी संकीर्ण विचारधारा के कारण गौतम और दिव्या के रिश्तों में दरार पड़ने लगती है।

सुषम बेदी की कहानी 'विषकन्या' वास्तव में आधुनिक भारतीय समाज में व्याप्त लैंगिक विभेद की उस विडंबना को उजागर करती है, जहाँ एक ओर बेटी से असीम त्याग, कर्तव्यनिष्ठा और सेवा की अपेक्षा की जाती है, तो वहीं दूसरी ओर संपत्ति और अधिकारों के मामले में उसे 'पराया धन' मानकर उसकी उपेक्षा कर दी जाती है। सुरभि का चरित्र इस द्वंद्व का जीता-जागता उदाहरण है— वह पिता के प्रति समर्पित है, अंग्रेजी के ज्ञान से परिवार के प्रवासी जीवन की बाधाओं को दूर करती है, भाई-बहनों की शिक्षा में योगदान देती है, लेकिन जब संपत्ति के बंटवारे की बारी आती है, तो वह न सिर्फ अपने पिता से, बल्कि उन्हीं परंपराओं से भी वंचित हो जाती है, जिनके नाम पर उससे हमेशा त्याग की अपेक्षा की गई। यह कहानी केवल एक महिला के व्यक्तिगत दुःखान्त की कथा नहीं है, बल्कि उस संरचनात्मक पितृसत्ता पर एक कड़ा प्रहार है, जो बेटी के योगदान को तो 'धर्म' का रूप देती है, पर उसके अधिकारों को 'लोभ' या 'परंपरा का उल्लंघन' करार देती है। सुरभि का मानसिक द्वंद्व यही दर्शाता है कि आज भी अधिकांश महिलाएँ सामाजिक दबावों के कारण अपने ही अधिकारों के लिए आवाज उठाने में असमर्थ हैं, और यदि कोई उठाती भी है, तो उसे 'विषकन्या' जैसे आरोपों से सहमा दिया जाता है।

सुषम बेदी ने अपनी कहानी 'चिड़िया और चील' में बच्चों द्वारा माता-पिता को अपना विरोधी समझने की मानसिकता का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण किया है। कहानी की प्रमुख पात्र 'चिड़िया' अपने माता-पिता की इकलौती संतान है। उसकी माँ उसे डॉक्टर तथा पिता उसे वकील बनाना चाहते हैं। इस कारण वे दोनों उस पर निरंतर पढ़ाई का अत्यधिक दबाव बनाए रखते हैं। माता-पिता की यह अपेक्षा और निरंतर दबाव चिड़िया के मन में प्रतिरोध की भावना उत्पन्न कर देता है। परिणामस्वरूप, वह अपने ही माता-पिता को अपना सबसे बड़ा शत्रु समझने लगती है। एक प्रसंग में वह स्पष्ट रूप से कहती है कि माता-पिता अपनी अधूरी इच्छाओं और असफल सपनों को बच्चों के माध्यम से पूरा करना चाहते हैं तथा किशोरों को ऐसे दिशा देने का प्रयास करते हैं माता-पिता की यह अपेक्षा और निरंतर दबाव चिड़िया के मन में प्रतिरोध की भावना उत्पन्न कर देता है। परिणामस्वरूप, वह अपने ही माता-पिता को अपना सबसे बड़ा शत्रु समझने लगती है। एक प्रसंग में वह स्पष्ट रूप से कहती है कि माता-पिता अपनी अधूरी इच्छाओं और असफल सपनों को बच्चों के माध्यम से पूरा करना चाहते हैं तथा किशोरों को ऐसे दिशा देने का प्रयास करते हैं, मानो उन्हें चाबुक मारकर आगे बढ़ाया जा रहा हो। चिड़िया के इस तीखे कथन से उसके माता-पिता चकित अवश्य होते हैं, किंतु वे अपने व्यवहार में कोई विशेष परिवर्तन नहीं करते। वास्तव में, चिड़िया का मन पढ़ाई में नहीं लगता और उसे यह अनुभव होता है कि उसके माता-पिता तानाशाही रवैया अपनाकर उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास में बाधा डाल रहे हैं। इसी कारण वह धीरे-धीरे उनके प्रति उदासीन हो जाती है और 'आई लव माईसेल्फ' के सिद्धांत को अपनाकर आत्मकेन्द्रित जीवन जीने लगती है। इस कहानी के माध्यम से लेखिका यह स्पष्ट करती है कि पीढ़ीगत अंतर के कारण रक्त संबंधों में भी भावनात्मक दूरी उत्पन्न हो सकती है। जब संवाद, सहानुभूति और परस्पर समझ का अभाव होता है, तब माता-पिता और संतान के संबंध शिथिल पड़ने लगते हैं तथा आपसी अपनापन धीरे-धीरे क्षीण हो जाता है।

सुषम बेदी की कहानी 'गुनहगार' प्रवासी जीवन की विडंबनाओं, अकेलेपन और नैतिक द्वंद्व को अत्यंत सूक्ष्मता से प्रस्तुत करती है। 'गुनहगार' कहानी एक ऐसी वृद्ध महिला के इर्द-गिर्द घूमती है, जो प्रवासी जीवन में अकेली पड़ गई है। उसके पति का निधन हो चुका है और बच्चे अपने-अपने जीवन में व्यस्त हैं।

कुछ लोग प्रवासी लेखन को अतीत-जीवी या नास्टैल्लिया भरा पाते हैं। इस विषय में सुषम बेदी का कहना है— "हाँ, कुछ लोग इसे प्रवासी लेखकों का नास्टैल्लिया भी कहते हैं। नास्टैल्लिया बुरी चीज नहीं है। यह एक मूल्य है जो पहली पीढ़ी के प्रवासी लेखकों की चेतना का अंश है। उसका होना ही प्रवासी साहित्य का विशेष होना है। इससे वह कमतर नहीं होता बल्कि एक साथ दोहरी संवेदनाओं से पाठक का साक्षात्कार होता है, कथा में दोहरा रस मिलता है। कहानी का बिम्ब और घना हो जाता है। फिर सच यह भी है कि पाश्चात्य जगत में हिंदी में लिखने वाले प्रवासी लेखक जयादातर पहली पीढ़ी के ही हैं। इसलिए दोहरी चेतना उनमें रहती ही है। इसे नास्टैल्लिया कहकर दुत्कारने की जरूरत नहीं है। यह तो यहाँ के जीने का एक तरीका है, जहाँ हम लगातार दो संस्कृतियों, दो तरह की संवेदनाओं और नजरियों के साथ जीते हैं। हमारे चाल चलन, हमारी सोच, हमारी प्रतिक्रियाओं में बसे रहते हैं। यहाँ के बच्चे प्रवासी लेखक नहीं बन सकते। हिंदी सीख जायें वही बहुत दूर की बात है। एक असंभव संभावना। उनका लेखन जब सामने आएगा तो अंग्रेजी में ही होगा। इसलिए जब हम हिंदी प्रवासी लेखन की बात करते हैं तो पहली पीढ़ी के लेखन की ही होती है और इसमें दोहरी संवेदना का होना स्वाभाविक ही है।"

प्रवासी साहित्य भारतीय जीवन मूल्यों का एक जीवंत दर्पण है। यह यह नहीं दिखाता कि ये मूल्य स्थिर या पुरातन हैं, बल्कि यह दिखाता है कि वे गतिशील, अनुकूलनशील और लचीले हैं। यह साहित्य पाठकों को यह समझने का अवसर देता है कि भारतीय होने का अर्थ स्थिर रहना नहीं, बल्कि बदलते हुए परिवेश में अपनी जड़ों को पहचानते हुए नए अर्थों का सृजन करना है। कुल मिलाकर, यह साहित्य पीढ़ियों और महाद्वीपों के बीच एक सेतु का काम करता है, जो भारतीयता की वैश्विक समझ को समृद्ध करता है। प्रवासी साहित्य केवल कहानियाँ नहीं है यह एक मानसिक और भावनात्मक भूगोल का नक्शा है। यह पाठक को वह अनुभव कराता है जो खुद प्रवासी झेलते हैं – एक पैर जहाँ का, एक पैर वहाँ काय बीच में एक पुल जो कभी मजबूत तो कभी बेहद कमजोर लगता है।

संदर्भ सूची

1. सुषम बेदी – हवन –
2. https://www.abhivyakti-hindi.org/kahaniyan/vatan_se_door/2014
3. हिन्दी साहित्य में उभरता प्रवासी साहित्य – राजपाल (Pravasi Sahitya) – विश्वहिंदीजन चौपाल
4. सुषम बेदी – लौटना
5. सुषम बेदी – कतरा दर कतरा
6. https://hindisepyarhai-blogspot-com/2022/07/blog&post_10-html
7. <https://sushambedi-https://sushambedi.com/on-susham-jj/articles/pravaasi-sahitya-saakshaatkaa>
8. https://www.abhivyakti-hindi.org/snibandh/2011/pravasi_hindi_sahitya
9. सुषम बेदी – इतर
10. सुषम बेदी – गाथा अमर बेल की